Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
July to September 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LV (55), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

कुँअर बेचैन के गीतों में युगबोध एवं समसामायिक जीवन की अभिव्यक्ति

प्रीति रामरतन नागौर*

* शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – कुँअर बेचैन ने अपने गीतों में युग बोध एवं समसामायिक जीवन का सजीव चित्रण किया है। बेचैन जी हिन्दी गीत और नवगीत परम्परा के महत्वपूर्ण रचनाकार है। उनके गीतों में व्यक्तिगत अनुभूति के साथ–साथ अपने समय की सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक और सांस्कृतिक स्थितियों का प्रभाव दिखाई देता है। उनके प्रारंभिक गीत संग्रह 'पिन बहुत सारे'(1972) और 'भीतर साँकल– बाहर साँकल'(1978) से लेकर बाद की सभी रचनाओं तक में आधुनिक जीवन बोध निरंतर विकसित होता दिखाई देता है।

प्रस्तावना – गीत साहित्य की लोकप्रिय विधा है। 'गीत' शब्द संस्कृत की 'गै' धातु से बना है, जिसका अर्थ है–गाना। गीत वह काव्य–रचना है, जिसे गाया जा सकता है और जिसमें कवि अपने हृदय की भावनाओं को लयात्मक एवं संक्षिप्त रूप में व्यक्त करता है। सरल शब्दों में मन के भावों को मधुर लय और संगीत के साथ व्यक्त करने वाली काव्य–रचना को गीता कहते हैं। गीत की परिभाषा –महादेवी वर्मा के अनुसार –'सुख–दु:ख की भावावेगमयी अवस्था – विशेष को गिने – चुने शब्दों में स्वर–साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है'।(1)

वैसे तो गीत सृष्टि की सबसे प्राचीन और सनातन विधा रही है। साधारण शब्दों में स्वर, पद और ताल से युक्त जो गान होता है, वह गीत कहलाता है। उसमें एक मुखड़ा तथा कुछ अंतरे होते हैं। प्रत्येक अंतरे के बाद मुखड़े को दोहराया जाता है।

21वीं सदी के हिन्दी गीतकारों ने लोक–जीवन में आने वाले बदलावों को अपनी रचनाओं के केन्द्र में रखा है। यह विधा मनुष्य जीवन के सर्वाधिक निकट है।यह मनुष्य के सभी क्रियाकलापों की सहचर है। सुख हो या दु:ख सभी में अपनी भावानुभूतियों के लिए गीतों की रचना की जाती है। गीतों में अन्तर्निहित युग बोध की भावना ही उसे प्रतिष्ठा एवं सम्मान प्रदान करती है। किसी भी प्रकार का साहित्य, यदि अपने युग की अवधारणाओं से विमुख है, तो वह कभी–भी आमजन का साहित्य नहीं बन सकता।

युगबोध का सामान्य भाषा में प्रयोग करते हुए इसे हम समसामयिक परिस्थितियों का ज्ञान कहते हैं। यह दो शब्दों के मेल से बना है– युग+बोध। युग शब्द का कालिका प्रसाद द्वारा संपादित बृहत हिन्दी कोष के अनुसार अर्थ है– समय, काल। बोध का अर्थ है– प्रतीति, जानकारी अथवा किसी के अस्तित्व के प्रकार, स्वरूप का ज्ञान। युगबोध एक वृहत व्यापक विषय है, इसके अन्तर्गत राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक सभी प्रकार के युगीनबोध समाहित है।

साधारण व्यक्ति के समान कवि भी एक सामाजिक प्राणी ही होता है। यह असंभव है कि वह युगीन चेतना से प्रभावित हुए भी रह जाये। हिन्दी गीतों में युगबोध तथा समसामायिक जीवन की अभिव्यक्ति के अनेक रूप मुखर हुए हैं। हिन्दी गीतकारों ने जनसाधारण के दु:ख–दर्द का वर्णन किया है, जिसका एक कारण यह भी है कि हिन्दी गीत कल्पना की दुनिया से न जुड़कर यथार्थ पर ही अधिक आधारित हो गये है। युगबोध को 'युग परिवेश', 'युग परिप्रेक्ष्य' और 'युग का परिदृष्य' भी कहते हैं।

'प्रत्येक देश व समाज का अपना बोध होता है और युग परिवर्तन के साथ यह परिवर्तित होता रहता है इस प्रकार हम किसी विशिष्ट काल–खण्डमें अपने परिवेश में होने वाले राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, प्राकृतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवर्तनों के प्रति सजगता, उनको महसूस करने की क्षमता एवं उनके प्रति प्रतिक्रिया को युगबोध कह सकते है। यह युग चेतना का पर्यायवाची शब्द है। युगबोध ही निर्जीव पदार्थों से जीवधारियों को भिन्न बनाता है। युगबोध का विकास मनुष्य में धीरे–धीरे होता है, बचपन में वह अपने परिवार, आस–पड़ोस के प्रभाव से सीखता है। उम्र बढ़ने के साथ–साथ वातावरण के प्रभाव से औचित्य, नैतिकता एवं व्यवहार कुशलता सीखता है। विकास की चरम सीमा में उसकी स्वतंत्रता चेतना (युगबोध) का विकास हो सकता है।'(2)

बेचैन जी का गीत संग्रह 'भीतर सांकल: बाहर सांकल' स्वतंत्र्योत्तर भारतीय परिवेश में उत्पन्न विसंगतियों की सशक्त अभिव्यक्ति है। औद्योगीकरण के कारण नगरीकरण का दौर चला, जिसमें ग्रामीणों ने नगरों की ओर पलायन करना शुरू कर दिया। नगरीयकरण की इसी घुटन भरी जिन्दगी का वर्णन करते हुए बेचैन जी गीत गाते हैं –

'ऊपर लेबल अमृत है
भीतर भरा जहर,
जिस बोतल में कैद हुआ हूँ
उसका नाम शहर।'(3)

कालान्तर में महानगरीय जीवन ने लोगों की स्वाभाविकता को नष्ट करके उनमें अकेलेपन, कुण्ठा, घुटन, अजनबीपन जैसी संत्रास प्रवृत्ति को पैदा कर दिया है। इस गीत में महानगरीय जीवन की इसी त्रासदी को अभिव्यक्ति मिली है।

आज का मनुष्य अकेलेपन और कुण्ठा से ग्रस्त होकर अवसाद का

षिकार होता जा रहा है। वह सांस भी लेता है, तो उसे चुभन और थकान लगती है। इसी अवसादवादी पीड़ा को बेचैन जी ने अपने इस गीत में व्यक्त किया है –

'सांसों में कोई चुभन न रख
तू मन में केाई थकान न रख
दुनिया के मेले में प्यारे
तेरी हर आह अकेली है।
तेरी अपनी पीड़ाओं की केवल मुस्कान सहेली है।'(4)

वर्तमान में मनुष्य भय और आतंक में जीवन व्यतीत कर रहा है। उसे अपने ही घर में अपनों से ही खतरा महसूस होता है।आज रिश्तों पर से भी विश्वास उठ सा गया है। इसी को बेचैन जी ने व्यक्ति किया है–

'कौन –सा पल था
न था बर्बर कभी जो
न भय–आतंक का था
घर कभी जो।'(5)

आज पैसे की चाह और रोजगार की तलाश में मनुष्य अपने परिवार को छोड़कर एक शहर से दूसरे शहर क्या एक देश से दूसरे देश जाने को मजबूर हैं और जबवह अपने देश को छोड़कर दूसरे देश चले जाते हैं, तब वे वहां की चकाचौंध भरी दुनिया में खोकर अपने परिवार, सगे–सम्बंधियों और देश को भी भूल जाते हैं।इसी संवेदना को बेचैन जी ने अपने गीत में व्यक्त किया है –

'भइया पश्चिम देस गए तो पुरवाइया को भूल गए,
हंसते–गाते आंगन की हर ता–थइया को भूल गए,
रामचरितमानस से घर की चौपाइया को भूल गए,
भूल गए बूढ़े बापू को, क्यों मइया को भूल गए।'(6)

समकालीन समाज में राजनीतिक संवेदना बहुत हावी हो रही है। इस संवेदना में अराजक तत्वों का बढ़ता प्रभाव, मौकापरस्ती, गुटबाजी में पिसता समाज, वोट और चुनाव की राजनीति में मानवीय मूल्यों में गिरावट अवसरवादी प्रवृत्ति दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही हैं।

वर्तमान युग में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। यहाँशासक जनता का मनचाहा शोषण कर रहे हैं और जनता चाहकर भी उनके विरूद्ध आवाज नहीं उठा पाती। बेचैन जी ने अपने गीत में 'गिद्ध' सत्ताधारी शासक और 'कोने से फटा खत' आम जनता को प्रतीक के रूप में लेकर राजनीतिक संवदेना को दर्शाने का प्रयास किया गया है –

'अचरज न हो तो और क्या हो सोच–सोचकर
वे गिद्ध खा रहे हैं, मांस नोच–नोंचकर,
इस पर भी 'आदमी'यह मौनव्रत है आजकल
हर'आदमी' कोने से फटा खत है आजकल।'(7)

भारत एक प्रजातांत्रिक देश है और यहां की जनता ही शासकों का चुनाव करती है। कभी–कभी जनता द्वारा ऐसा शासक चुन लिया जाता है, जिसकी कथनी और करनी में बहुत अन्तर होता है। जब तक शासक सत्ता में नहीं आता, तब तक जनता के आगे हाथ फैलाये फिरते हैं, किन्तु सत्ता में एक बार आ जाने के बाद अनायास ही कहीं गायब हो जाते हैं और अपने वादे भूल जाते हैं। बेचैन जी ने ऐसे ही दोहरी प्रवृत्ति वाले शासकों के कर्मो को अपने इस गीत में उजागर किया है –

'तुलसी के दोहे – चौपाई'
भूल गये है मग
पद भी आज सूर–मीरा के घायल है लगभग
करनी–कथनी भूल गये हैं
साखी और सबद।
जीवन में कुछ बैठ गयी है
राजनीति ऐसी आज झूठ के साथ चल रहे सच के
अन्वेशी साँसे प्रजातन्त्र है
जीवन बना हुआ संसद।'(8)

आज कल मनुष्य को भौतिकता की इतनी हवा लग गई है कि अपनी कम उपयोगी वस्तुओं के लिए उसके पास पर्याप्त धन है, किन्तुत अपने माता–पिता की दैनिक उपयोगी वस्तुओं की ओर उनका ध्यान बिल्कुल नहीं है। कई संतानें तो अपने माता–पिता की जिम्मेदारी उठाने के बजाय उन्हें वृद्धाश्रमों में जाने को मजबूर कर देते हैं माता–पिता की इसी विडम्बना को बेचैन जी ने अपने गीत द्वारा व्यक्त किया है –

'कैसी विडम्बना है
जिस दिन ठिठुर रही थी
कुहरे भरी नींद में, माँ की उदास काया
लेने चला था चादर, मैं मेजपोश लाया'(9)

समाज में दिन–प्रतिदिन रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है और इन सबमें शिक्षा का क्षेत्र भी पीछे नहीं रहा। वह भी चपेट में आ चुका है। आज योग्य विद्यार्थी नौकरी के लिए अपनी पूरी ताकत लगा देता है, किन्तु कुछ अयोग्य और रिश्वतखोरों के कारण उसकी मेहनत का फल उसे न मिल अपात्र–धनवान को दे दिया जाता है। इसी रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार को बेचैन जी ने अपने इस गीत में व्यक्त किया है –

'गलत दिशा
चुनी अगर
कागज पेट ने
उसको सम्मान दिया
हर पेपरवेट ने।'(10)

तात्कालीन समाज में व्याप्त गरीबी और भूखमरी दिन–प्रतिदिन बढ़ते रहने का सबसे बड़ा कारण है। जनसंख्या वृद्धि और महंगाई। बढ़ती हुई महंगाई ने आम–आदमी का जीवन दुभर कर दिया है। भारत एक ओर कृषि प्रधान देश है। जहाँ अधिकांश लोग गांवों में निवास करते हैं और जीवन–व्यापन के लिए पूर्णरूप से कृषि पर निर्भर है। वहीं दूसरी ओर रोजगार की तलाश में कुछ नवयुवक गांवों से निकलकर शहरों की ओर पलायन करने लगे है।

इसका एक मुख्य कारण है स्वतंत्रता के इतने वर्षो बाद भी कृषकों के जीवन में कोई परिवर्तन न आना, बल्कि समय के साथ स्थिति और बुरी होती जा रही है। कृषक आज भी बढ़ती महंगाई, फसल का उचित दाम न मिलना और प्रकृति की मार झेल रहा है। बेचैन जी ने ऐसे ही आर्थिक स्थिति को झेलते कृषक की दयनीय स्थिति को अपने गीत में व्यक्त किया है।

'सूखा पेटों के खेतों को
वर्षा नयनाकाश को,
शीत–हड्डियों की ठठरी को
जीवन दिया विनाश को
भूखी है हर साँस

जुती लेकिन कोल्हू के बैल – सी'(11)

इसी गीत में बेचैन जी किसान के खेतों को वर्षा की आश में तड़पते और शरद ऋतु की हड्डियां गलाने वाली रातों में भी अपनी फसल की रक्षा के लिए रात भर जागना और भूखे–प्यासे कोल्हू के बैल की तरह जीतोड़ मेहनत करते दर्शाया है।

समाज में सम्पन्न और उच्च वर्ग के लोगों द्वारा निर्धन वर्ग के लोगों का आर्थिक शोषण समय के साथ–साथ बढ़ते जा रहा है। उच्च वर्ग गरीबों के अधिकारों को छिन रहे हैं और चैन की नींद भी सौ रहे हैं। उनमें दया भाव का अंश मात्र नहीं है। अमीर यदि कोई भी अपराध करें, तो उसके लिए कोई बंधन नहीं है, क्योंकि उसके पास धन है, किन्तु गरीबों को अपना पूरा जीवन धन के अभाव में बंधनों में बंधकर बिना अपराध के भी काटना पड़ता है, समाज की इसी विडम्बना को बेचैन जी ने अपने इस गीत में दर्शाया है –

'जो किसी भूखे के पेट को काटकर
पेट पर हाथ फेरकर सो रहे
छू न पाई उन्हें एक भी हथकड़ी
एक वे है कि जो बेड़ियां ढो रहे है।'(12)

प्राचीन समय में लोग एक–दूसरे को बड़ा मान–सम्मान देते थे, किन्तु वर्तमान में लोगों के संस्कार कहीं न कहीं मरते जा रहे हैं। व्यक्ति संस्कारहीन होता जा रहा है। जो व्यक्ति पहले बुजुर्गों यहां तक की नौकरों को भी मान–सम्मान देता था। वह आज अपने ही माता–पिता का अपमान करता जा रहा है। आज की नयी पीढ़ी अपने माता–पिता, गुरूजनों के प्रति असंवेदनशील होती जा रही है। उनकी जरूरतों को भी अनेदखा करते जा रही है। बेचैन जी ने इसी संवेदना को अपने गीत में व्यक्त किया है –

'मां की सांस
पिता की खांसी
सुनते थे जो पहले, अब वे कान नहीं।'(13)

सदियों से हमारे समाज में कुछ ऐसे रीति–रिवाज चले आ रहे हैं, जो भारतीय, संस्कृति के पोषक है। रीति–रिवाज, मान्यताएं जो पीढ़ी दर पीढ़ी चलती जा रही हैं, परन्तु पश्चिमी सभ्यता के अंधानुकरण के कारण युवा वर्ग इन रीति–रिवाजों को पिछड़ेपन का प्रतीक मानकर उनकी उपेक्षा करने लगा है। जिससे हमारी भारतीय संस्कृति को क्षति पहुंच रही है। जिसे बेचैन जी ने अपने गीत में कुछ इस प्रकार दिखाया है –

'विश्व – नभ में हम पतंग – से उड़ रहे हैं
छीनकर हमको सभी पछवा हवाएँ
तोड़कर धागे हमारी आस्था के
वे न जाने किस जगह हमको गिराएँ
पत्र है पुरवाइयों के नाम
वे न बैठे ठोड़ियों केा थाम – नव दिशा को में मीत दें वे।'(14)

उपर्युक्त पंक्तियों में 'पुरवाइयां' भारतीय संस्कृति और 'पछवा' पश्चिमी सभ्यता का प्रतीक है। यहां बेचैन जी का आशय है कि आज युवा वर्ग की स्थिति पतंग की भांति हो गयी है, जो पश्चिमी सभ्यता के बहाव में बही जा रही है। कवि 'पुरवाइ' रूपी भारतीय संस्कृति को बेड़ियों से मुक्त होने तथा नव – दिशा रूपी समायानुकूल रीति–रिवाजों को बचाये रखने की बात कर रहे है।

निष्कर्ष – कुँअर बेचैन के गीत अत्यन्त पारदर्शी है। से सूक्ष्म स्थितियों और मन: स्थितियों को पकड़कर इतनी संवेदनशीलता से व्यक्त कर देते हैं कि किसी ओर का दु:ख, आँसु और पीड़ा न जाने कब अपनी – सी लगने लगती है। इनके नवगीतों में प्रयुक्त प्रतीक आम जिन्दगी से लिए गए है। पर कहीं–कहीं कुछ दुरूह, जटिल एवं सम्प्रेषण में बाधक सिद्ध हुए हैं। जो चमत्कार उत्पन्न करने में तो समर्थ है पर सहजता को अवरूद्ध करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. महादेवी वर्मा –'यामा' पृ. – 7
2. संजय सिंह यादव–21 वीं सदी, के प्रारम्भिक दो दशकों के नवगीतों में युगबोध – पृ. 28
3. कुँअर बेचैन –'भीतर सांकल : बाहर सांकल'– पृ. 22
4. कुँअर बेचैन –'सदाबहार गीतकार' – पृ. 89
5. कुँअर बेचैन –'सदाबहार गीतकार'– पृ. 137
6. कुँअर बेचैन –'सदाबहार गीतकार'– पृ. 142
7. कुँअर बेचैन –'भीतर सांकल : बाहर सांकल'– पृ. 66
8. कुँअर बेचैन –'पिन बहुत सारे'–पृ. 64
9. कुँअर बेचैन –'भीतर सांकल : बाहर सांकल'– पृ. 17
10. कुँअर बेचैन –'पिन बहुत सारे'– पृ. 44
11. कुँअर बेचैन –'पिन बहुत सारे'– पृ. 43
12. कुँअर बेचैन –'नदी पसीने की'– पृ. 74
13. कुँअर बेचैन –'कुँअर बेचैन के नवगीत'– पृ. 94
14. कुँअर बेचैन –'पिन बहुत सारे'– पृ. 97–98

****